लाख की चूड़ियाँ
भाग –दो

काँच की चूड़ियाँ

यदि संसार में बदलू को किसी बात से चिढ़ थी तो वह थी काँच की चूड़ियों से। यदि किसी भी स्त्री के हाथों में उसे काँच की चूड़ियाँ दिख जातीं तो वह अंदर-ही-अंदर कुढ़ उठता और कभी-कभी तो दो-चार बातें भी सुना देता।

मुझसे तो वह घंटों बातें किया करता। कभी मेरी पढ़ाई के बारे में पूछता, कभी मेरे घर के बारे में और कभी यों ही शहर के जीवन के बारे में। मैं उससे कहता कि शहर में सब काँच की चूड़ियाँ पहनते हैं तो वह उत्तर देता, "शहर की बात और है, लला! वहाँ तो सभी कुछ होता है। वहाँ तो औरतें अपने मरद का हाथ

पकड़कर सड़कों पर घूमती भी हैं और फिर उनकी कलाइयाँ नाजुक होती हैं न! लाख की चूड़ियाँ पहनें तो मोच न आ जाए।"

कभी-कभी बदलू मेरी अच्छी खासी खातिर भी करता। जिन दिनों उसकी गाय के दूध होता वह सदा मेरे लिए मलाई बचाकर रखता और आम की फसल में तो

लाख की गोलियाँ

मैं रोज ही उसके यहाँ से दो-चार आम खा आता। परंतु इन सब बातों के अतिरिक्त जिस कारण वह मुझे अच्छा लगता वह यह था कि लगभग रोज़ ही वह मेरे लिए एक-दो गोलियाँ बना देता।

मैं बहुधा हर गर्मी की छुट्टी में अपने मामा के यहाँ चला जाता और एक-आध महीने वहाँ रहकर स्कूल खुलने के समय तक वापस आ जाता। परंतु दो-तीन बार ही मैं अपने मामा के यहाँ गया होऊँगा तभी मेरे पिता की एक दूर के शहर में बदली हो गई और एक लंबी अवधि तक मैं अपने मामा के गाँव न जा सका। तब लगभग आठ-दस वर्षों के बाद जब मैं वहाँ गया तो इतना बड़ा हो चुका था कि लाख की गोलियों में मेरी रुचि नहीं रह गई थी। अत: गाँव में होते हुए भी कई दिनों तक मुझे बदलू का ध्यान न आया। इस बीच मैंने देखा कि गाँव में लगभग सभी स्त्रियाँ काँच की चूड़ियाँ पहने हैं। विरले ही हाथों में मैंने लाख की चूड़ियाँ देखीं। तब एक दिन सहसा मुझे बदलू का ध्यान हो आया। बात यह हुई कि बरसात में मेरे मामा की छोटी लड़की आँगन में फिसलकर गिर पड़ी और उसके हाथ की काँच की चूड़ी टूटकर उसकी कलाई में घुस गई और उससे खून बहने लगा। मेरे मामा उस समय घर पर न थे। मुझे ही उसकी मरहम-पट्टी करनी पड़ी। तभी सहसा मुझे बदलू का ध्यान हो आया और मैंने सोचा कि उससे मिल आऊँ। अत: शाम को मैं घूमते-घूमते उसके घर चला गया। बदलू वहीं चबूतरे पर नीम के नीचे एक खाट पर लेटा था।

नमस्ते बदलू काका! मैंने कहा।

नमस्ते भइया! उसने मेरी नमस्ते का उत्तर दिया और उठकर खाट पर बैठ गया। परंतु उसने मुझे पहचाना नहीं और देर तक मेरी ओर निहारता रहा।

मैं हूँ जनार्दन, काका! आपके पास से गोलियाँ बनवाकर ले जाता था। मैंने अपना परिचय दिया।

बदलू फिर भी चुप रहा। मानो वह अपने स्मृति पटल पर अतीत के चित्र उतार रहा हो और तब वह एकदम बोल पड़ा, आओ-आओ, लला बैठो! बहुत दिन बाद गाँव आए।

हाँ, इधर आना नहीं हो सका, काका! मैंने चारपाई पर बैठते हुए उत्तर दिया।

काँच की चूड़ियाँ

रज्जो

कुछ देर फिर शांति रही। मैंने इधर-इधर दृष्टि दौड़ाई। न तो मुझे उसकी मचिया ही नज़र आई, न ही भट्ठी।

आजकल काम नहीं करते काका? मैंने पूछा।

नहीं लला, काम तो कई साल से बंद है। मेरी बनाई हुई चूड़ियाँ कोई पूछे तब तो। गाँव-गाँव में काँच का प्रचार हो गया है। वह कुछ देर चुप रहा, फिर बोला, मशीन युग है न यह, लला! आजकल सब काम मशीन से होता है। खेत भी मशीन से जोते जाते हैं और फिर जो सुंदरता काँच की चूड़ियों में होती है, लाख में कहाँ संभव है?

लेकिन काँच बड़ा खतरनाक होता है। बड़ी जल्दी टूट जाता है। मैंने कहा।

नाज़ुक तो फिर होता ही है लला! कहते-कहते उसे खाँसी आ गई और वह देर तक खाँसता रहा।

मुझे लगा उसे दमा है। अवस्था के साथ-साथ उसका शरीर ढल चुका था। उसके हाथों पर और माथे पर नसें उभर आई थीं।

जाने कैसे उसने मेरी शंका भाँप ली और बोला, "दमा नहीं है मुझे। फसली खाँसी है। यही महीने-दो-महीने से आ रही है। दस-पंद्रह दिन में ठीक हो जाएगी।"

मैं चुप रहा। मुझे लगा उसके अंदर कोई बहुत बड़ी व्यथा छिपी है। मैं देर तक सोचता रहा कि इस मशीन युग ने कितने हाथ काट दिए हैं। कुछ देर फिर शांति रही जो मुझे अच्छी नहीं लगी।

आम की फसल अब कैसी है, काका? कुछ देर पश्चात मैंने बात का विषय बदलते हुए पूछा।

'अच्छी है लला, बहुत अच्छी है, उसने लहककर उत्तर दिया और अंदर अपनी बेटी को आवाज़ दी, अरी रज्जो, लला के लिए आम तो ले आ। फिर मेरी ओर मुखातिब होकर बोला, माफ़ करना लला, तुम्हें आम खिलाना भूल गया था।

नहीं, नहीं काका आम तो इस साल बहुत खाए हैं।

वाह-वाह, बिना आम खिलाए कैसे जाने दूँगा तुमको?

बदलू की गाय

बदलू का आखिरी लाख का जोड़ा – रज्जो की कलाई

मैं चुप हो गया। मुझे वे दिन याद हो आए जब वह मेरे लिए मलाई बचाकर रखता था।

गाय तो अच्छी है न काका? मैंने पूछा।

गाय कहाँ है, लला! दो साल हुए बेच दी। कहाँ से खिलाता?

इतने में रज्जो, उसकी बेटी, अंदर से एक डलिया में ढेर से आम ले आई।

यह तो बहुत हैं काका! इतने कहाँ खा पाऊँगा? मैंने कहा।

वाह–वाह! वह हँस पड़ा, शहरी ठहरे न! मैं तुम्हारी उमर का था तो इसके चौगुने आम एक बखत में खा जाता था।

आप लोगों की बात और है। मैंने उत्तर दिया।

अच्छा, बेटी, लला को चार–पाँच आम छाँटकर दो। सिंदूरी वाले देना। देखो लला कैसे हैं? इसी साल यह पेड़ तैयार हुआ है।

रज्जो ने चार–पाँच आम अंजुली में लेकर मेरी ओर बढ़ा दिए। आम लेने के लिए मैंने हाथ बढ़ाया तो मेरी निगाह एक क्षण के लिए उसके हाथों पर ठिठक गई। गोरी–गोरी कलाइयों पर लाख की चूड़ियाँ बहुत ही फब रही थीं।

बदलू ने मेरी दृष्टि देख ली और बोल पड़ा, यही आखिरी जोड़ा बनाया था जमींदार साहब की बेटी के विवाह पर। दस आने पैसे मुझको दे रहे थे। मैंने जोड़ा नहीं दिया। कहा, शहर से ले आओ।

मैंने आम ले लिए और खाकर थोड़ी देर पश्चात चला आया। मुझे प्रसन्नता हुई कि बदलू ने हारकर भी हार नहीं मानी थी। उसका व्यक्तित्व काँच की चूड़ियों जैसा न था कि आसानी से टूट जाए।

–कामतानाथ

शब्दार्थ

चाव – चाह, तीव्र इच्छा

सलाख – सलाई, धातु की छड़

मुँगरी – गोल, मुठियादार लकड़ी जो ठोकने–पीटने के काम आती है

पैतृक – पूर्वजों का, पिता से प्राप्त या पुश्तैनी

खपत – माल की बिक्री

विनिमय – अदल–बदल, वस्तुओं की अदल–बदल

कसर – घाटा पूरा करना, कमी

नाज़ुक – कोमल

पगड़ी – सिर पर लपेटी जाने वाली कपड़े की लंबी पट्टी, पाग

मरहम–पट्टी – जख्म का इलाज, घाव पर दवा लगाकर पट्टी बाँधना

मचिया – सुतली आदि से बुनी छोटी/चौकोर चौकी

मुखातिब – देखकर बात करना

डलिया – बाँस का बना एक छोटा पात्र

फबना – सजना, शोभा देना